लोकसभा चुनाव-2014

भारतीय लोकतंत्र के ध्वंस की दिशा में एक और कदम

एच.एल. दुसाध

लोकसभा चुनाव-2014

भारतीय लोकतंत्र के ध्वंस की दिशा में एक और कदम

एच.एल. दुसाध

दुसाध प्रकाशन
लखनऊ

प्रथम संस्करण : 2014
द्वितीय संस्करण : 15 मार्च, 2020

ISBN : 978-81-87618-50-8

प्रकाशक : **दुसाध प्रकाशन**
प्लाट नं. 23/बी, मकान नं. 2/1467
डाइवर्सिटी हाउस, वार्ड-शंकरपुरवा
आदिल नगर, कल्याणपुर, लखनऊ-226022
E-mail : hl.dusadh@gmail.com
मो. : 9654816191

प्रशासनिक कार्यालय
B-1, 149/9 किशन गढ़, वसंत कुंज
नई दिल्ली-110070, सम्पर्क : 011-26125973

© **लेखक**

मूल्य : 500.00 रुपये

रचना	:	**लोकसभा चुनाव-2014 :** **भारतीय लोकतंत्र के ध्वंस की दिशा में एक और कदम**
लेखक	:	एच.एल. दुसाध
आवरण	:	शशिकान्त
शब्दांकन	:	कम्प्यूटेक सिस्टम, शाहदरा, दिल्ली-32
मुद्रक	:	क्वालिटी प्रिंटर्स, दिल्ली-32

समर्पण

वर्तमान दलित राजनीति के अन्यतम प्रमुख स्तम्भ
मा. ***रामदास आठवले*** *को*
जिनके अन्दर का पैंथर आज भी बड़ी उम्मीदे जगाता है

अनुक्रम

अध्याय-1

सोलहवीं लोकसभा चुनाव के मुद्दे

लोकसभा चुनाव-2014 के मुद्दे और डाइवर्सिटी	15
संविधान दिवस पर हमारा संकल्प	21
साम्प्रदायिक ताकतों को शिकस्त देने की तैयारी में जुट गए हैं नेताजी	23
अभी भी कायम है मुल्ला मुलायम का जलवा	25
लोकसभा चुनाव-2014 और आधी आबादी का मुद्दा	27
उम्मीद की किरण : सोशल मीडिया	30
विविधता में व्याप्त शत्रुता का कुफल	33
लोकसभा चुनाव-2014 में क्या हो बहुजन बुद्धिजीवियों की रणनीति!	36
क्या भाजपा के घोषणापत्र में बरकरार रहेगा डाइवर्सिटी का मुद्दा!	45
हम एक हैं : भाजपा-कांग्रेस	48
संकट में सामाजिक न्याय की राजनीति	51
बहुजनों! संघ और मोदी को साम्प्रदायिक प्रमाणित करने से परहेज करें	55
लोकसभा चुनाव : मुद्दा सामाजिक और लैंगिक विविधता का	58
काशी संसदीय क्षेत्र में एनजीओ गैंग के सरगना के उतरने पर दुसाध की अपील	61
लोकतंत्र को बचाने के लिए दूरगामी रणनीति की जरूरत	68
निचले पायदान पर सामाजिक न्याय का मुद्दा	71
मतदान केन्द्रों पर बढ़ती भीड़ : कमजोर पड़ती जातिवादी राजनीति का परिणाम	74
सूर्योदय पासवान को भीम सलाम : दुसाध	77

विविधता विरोधी मोदीफेस्टो 80
चुनावी मैदान में पेशेवरों की भीड़ का निहितार्थ 86

अध्याय-2

मोदी सरकार के एजेंडे में बहुजन कहां

जन्म ले चुका है भारतीय राजनीति का लाइलाज वायरस 'आप' 91
मोदी की सोशल इंजीनियरिंग 95
लौटना होगा कांशीराम के भागीदारी दर्शन की ओर 99
भयावह विषमता और अच्छे दिन 102
पुरस्कार से वंचित मोदी के अस्पृश्यतामोचक 105
मोदी के एजेंडे में कहां हैं दलित 111
भाजपा का दायित्व-भाव और दलित 117
कैसे हो कांग्रेस का पुनरुद्धार 120
कांग्रेस के पुनरुद्धार के लिए डाइवर्सिटी ही क्यों! 123
राहुल गांधी : हिन्दू मीडिया द्वारा तिरस्कृत एक ट्रेजडी नायक 128
राहुल गांधी : कल, आज और कल 131
हां! मंडल से हो सकती है कमंडल की काट 137
मंडल बनाम कमंडल 140
सम्पूर्ण न्याय तंत्र के प्रजातांत्रिकरण की जरूरत 147
बिहार विधानसभा उपचुनाव के सन्देश 150
ध्वस्त हो गयी मोदी की सोशल इंजीनियरिंग 153
उपचुनावों से उपजी समस्या का फौरी इलाज 156

अध्याय-3

साक्षात्कार

साक्षत्कार की प्रश्नावली
प्रश्नोत्तर
बुद्ध शरण हंस 164
अरविन्द कुमार पंकज 170
डॉ. विजय कुमार त्रिशरण 171
प्रमोद रंजन 173
बृजपाल भारती 176
अनिल कुमार 177
शीलबोधि 180
जनार्दन 183

लेखकीय

लोकसभा चुनाव-2014

जब भी लोकसभा या विधान सभा चुनावों की घोषणा होती है, छोटे-छोटे संगठन राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में अपने मुद्दे शामिल करवाने के लिए सक्रिय हो उठते हैं। इस लिहाज से देखा जाय तो बहुजन लेखकों द्वारा 2007 में स्थापित 'बहुजन डाइवर्सिटी मिशन'(बीडीएम) इस काम में कुछ ज्यादे ही सक्रिय रहा। ऐसा इसलिए कि संगठन के एजेंडे को लागू करवाने के लिए इसकी घोषित स्ट्रेटजी पार्टियों के घोषणा पत्रों में डाइवर्सिटी को शामिल करवाने की ही रही है। अतः 2009 में प्रचुर लेखन के साथ संगठन के तरफ से ढेरों सेमिनार आयोजित कर पार्टियों का ध्यान डाइवर्सिटी की ओर आकर्षित किया गया। परिणाम खूब निराशाजनक नहीं रहा। भाजपा जैसी बड़ी राष्ट्रीय पार्टी के घोषणा पत्र में डाइवर्सिटी को जगह मिली।

2009 में मिली आंशिक सफलता से उत्साहित होकर बीडीएम की ओर से बिहार विधान सभा चुनाव-2010 में कुछ अतिरिक्त प्रयास किया गया। इसके तहत सबसे पहले 15 मार्च को आयोजित होने वाले संगठन के स्थापना दिवस को पटना में आयोजित किया गया और चर्चा का विषय रखा गया 'बिहार विधान सभा चुनाव–2010 और डाइवर्सिटी।' उसके महीने भर के अन्दर इसी आशय से 11-16 अप्रैल, 2010 तक छः दिवसीय जनचेतना यात्रा निकाल कर भागलपुर ,बांका और मुंगेर में 18 सभाएं आयोजित की गयीं। अगले चरण में फिर 27 अगस्त को पटना में ही 'डाइवर्सिटी डे' का आयोजन कर तमाम पार्टियों को उनके घोषणा पत्रों में डाइवर्सिटी को जगह देने के लिए ज्ञापन सौंपा गया। लेकिन संगठन से जुड़े लोग इतने संतुष्ट नहीं थे। लिहाजा संगठन की ओर से चुनाव प्रचार के दौरान मुझे पूरे बिहार की यात्रा कर लोगों के माध्यम से राजनीतिक दलों पर दबाव बनाने का कार्य सौंपा गया। चुनाव प्रचार थमते-थमते मैंने बिहार के 18 जिलों की यात्रा पूरा किया। यात्रा के दौरान जिला मुख्यालयों में पहुँच कर प्रेस कांफ्रेंस किया। प्रेस कांफ्रेंस में मैं डाइवर्सिटी की घोषणा पत्रों में शामिल करवाने की जरुरत बतलाता। मुझ पर दिल्ली के लेखक-पत्रकार का टैग लगे होने के कारण स्थानीय अखबारों का भरपूर सहयोग मिला । अठारहों

जिलों में मेरी प्रेस रिलीज बहुत प्रमुखता से छपी। यही नहीं अठारहों जिले में प्रेस कांफ्रेंस के बाद वहां के दलित छात्रावासों में गया। वहां उनको संबोधित करता और 5-7 सौ की मात्रा में चुनाव पर तैयार छः पेज के पर्चे थमा देता। बीडीएम का प्रयास व्यर्थ नहीं गया। डाइवर्सिटी भाजपा के अतिरिक्त एकाध अन्य दलों को भी कुछ आकर्षित की। 2010 के बाद 2012 के यूपी विधान सभा चुनाव में संगठन की ओर से कोई भी प्रयास नहीं हुआ किन्तु बीजेपी के घोषणा पत्र में डाइवर्सिटी कुछ हद तक बरकरार रही।

लोकसभा चुनाव-2014 को ध्यान में रखकर बीडीएम एक बार फिर सक्रिय हुआ। इसलिए नवम्बर 2013 में जब 'आठवें डाइवर्सिटी डे' का आयोजन दिल्ली के जेएनयू में हुआ, अगले लोकसभा चुनाव में डाइवर्सिटी को शामिल करवाने के लिए चर्चा का विषय 'लोकसभा चुनाव- 2014 और डाइवर्सिटी' रखा गया। इस पर चर्चा करवाने के लिए प्रो. वीरभारत तलवार,सुरेश पंडित, प्रो. रमेश दीक्षित, अरुण कुमार त्रिपाठी,शीलबोधि, डॉ. लालजी प्रसाद 'निर्मल',बृजपाल भारती,अनुप्रिया पटेल और डॉ. उदित राज जैसे जाने माने विद्वानों, एक्टिविस्टों और नेताओं को आमंत्रित किया गया। उक्त अवसर पर यूं तो 'डाइवर्सिटी इयर बुक : 2013-14' 'जाति उन्मूलन : मार्क्सवादी बनाम आंबेडकरवादी परियोजना' और 'मंडल-3...' जैसी महत्त्वपूर्ण किताबों का विमोचन हुआ किन्तु जिसे सर्वाधिक गुरुत्व दिया गया वह था एक 6 पृष्ठीय फोल्डर ,जिसका शीर्षक था- 'लोकसभा चुनाव-2014 के मुद्दे और डाइवर्सिटी।' सोलहवीं लोकसभा चुनाव में राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में डाइवर्सिटी केन्द्रित दस सूत्रीय एजेंडा शामिल करवाना क्यों आवश्यक है, इसकी बलिष्ठ युक्ति बीडीएम के तरफ से उस फोल्डर में प्रस्तुत करते हुए शेष में कहा गया था—

'2014 के पूर्वार्द्ध में अनुष्ठित होने वाले लोकसभा चुनाव के पूर्व केंद्र की सत्ता दखल का सेमी-फाइनल माने-जाने वाले पांच राज्यों के विधानसभा चुनावों में जिस तरह राहत और भीखनुमा घोषणाओं की होड़ मची है,उसे देखते हुए दावे के साथ कहा जा सकता है कि 15 वीं लोकसभा की भांति 16 वीं लोकसभा चुनाव में भी मुफ्त में अनाज,रेडियो-टीवी-कंप्यूटर-कुकिंग गैस-साइकल,नकद राशि इत्यादि का प्रलोभन देकर वोट खरीदने का उपक्रम चलाया जायेगा। ऐसा करके राजनीतिक दल हमारे लोकतंत्र को विस्फोटित करने का कुछ और सामान जमा करेंगे। बहरहाल आज जबकि आजाद भारत के शासकों द्वारा शक्ति के स्रोतों में विविधता की अनदेखी के कारण देश में लोकतंत्र के विस्फोटित होने लायक प्रचुर सामान जमा हो चुका है तथा अगले लोकसभा में उसमें कुछ और इजाफा होने जा रहा है,हम क्या करें कि सोलहवीं लोकसभा चुनाव में ही लोकतंत्र के सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया तेज हो। इस दिशा में बहुजन लेखकों द्वारा स्थापित 'बहुजन डाइवर्सिटी मिशन' के दस सूत्रीय

एजेंडे से प्रेरणा लेकर राजनीतिक दलों को आर्थिक और सामाजिक विषमता के खात्मे तथा लोकतंत्र की सलामती पर अपने घोषणापत्रों को केन्द्रित करने के लिए दबाव बनाया जा सकता है।'

2013 के शेष तक विगत पांच-छः वर्षों में बीडीएम की ओर से डाइवर्सिटी के प्रचार-प्रसार का जो अनवरत अभियान चला उससे धीरे-धीरे ढेरों आंबेडकरवादी संगठनों के एजेंडे में घुमा फिराकर डाइवर्सिटी की बात आ गयी थी। इस समय तक सोशल मीडिया से भारी संख्या में उन समाजों के लोग जुड़ चुके थे, जिन्हें डाइवर्सिटी की बहुत जरुरत है। ऐसे में संगठन की ओर से फिल्ड में उतर कर डाइवर्सिटी को घोषणा पत्रों में शामिल करवाने के बजाय,लेखन माध्यम से इस काम को अंजाम देने का निर्णय लिया गया। उसके बाद संगठन से जुड़े विभिन्न लेखक अपने-अपने तरह से इस काम में लग गए। मैं भी पीछे नहीं रहा।

सोलहवीं लोकसभा चुनाव में डाइवर्सिटी एक बड़ा मुद्दा बने,इसके लिए मैंने नवम्बर-2013 से जो प्रयास किया, इस पुस्तक का पहला अध्याय उसका साक्ष्य वहन करता है। आठवें डाइवर्सिटी डे पर जारी फोल्डर की सामग्री को आधार बनाकर मैंने असंख्य लेख लिखे व अपील जारी किया पर, परिणाम शून्य रहा । मुझे सभी दलों से तो नहीं कमसे कम भाजपा के एजेंडे में डाइवर्सिटी के आने की पर्याप्त उम्मीद थी। क्योंकि इस दल ने लोकसभा चुनाव-2009,बिहार विधानसभा चुनाव-2010 और यूपी विधानसभा चुनाव - 2012 के अपने घोषणा पत्रों में कमोबेश लगातार इसे जगह दिया था। किन्तु जब डॉ. उदित राज,राम विलास पासवान,उपेन्द्र कुशवाहा, अनुप्रिया पटेल, छेदी पासवान, राम कृपाल यादव, जनक चमार ने गोधरा के लिए कुख्यात नरेंद्र मोदी की राजनीतिक अस्पृश्यता दूर कर दिया तब भाजपा की विजय निश्चित देखते हुए मैं उससे से भी निराश होने लगा। पढ़ें मेरा लेख-'क्या भाजपा के घोषणा पत्र में बरकरार रहेगा डाइवर्सिटी का मुद्दा!' भाजपा को लेकर मेरी आशंका सही साबित हुई। उसने भी अपने घोषणा पत्र में डाइवर्सिटी को जगह नहीं दिया।

विगत वर्षों में डाइवर्सिटी के लिए जो अक्लांत प्रयास किया गया, सोलहवें लोकसभा चुनाव में उस पर राजनीतिक दलों की चुप्पी देखकर बीडीएम के लोग पूरी तरह निराशा में डूब जाते, पर 'संख्यानुपाती भागीदारी पार्टी'(संभापा) ने हमें बचा लिया। संभापा वह नई पार्टी थी 2013 में जिसका निर्माण बीडीएम के एजेंडे पर हुआ था। इस पार्टी ने यूं तो प्रयोग के तौर पर बिहार में चार-पांच ही प्रार्थी चुनाव में उतारे । पर इससे जुड़े लोगों ने बता दिया है कि इस देश में कोई तो दल है जो बाबा साहेब डॉ. आंबेडकर द्वारा 25 नवम्बर 1949 को संसद के केन्द्रीय कक्ष में दी गयी चेतावनी को ध्यान में रखते हुए लोकतंत्र को विस्फोटित होने से बचाने की दिशा में कुछ ठोस काम करना चाहता है। इसलिए ही हमने एक लेख

लिख कर संभापा के राष्ट्रीय अध्यक्ष सूर्योदय पासवान को भीम सलाम नजर किया है। चूँकि बाकी दलों ने आर्थिक और सामाजिक गैर-बराबरी,जोकि मानव जाति की सबसे बड़ी समस्या है तथा जिसकी सर्वाधिक व्याप्ति भारत में है, के खात्मे की दिशा में कोई ठोस कार्यक्रम ही प्रस्तुत नहीं किया इसलिए मुझे यह कहने के लिए बाध्य होना पड़ा है कि सोलहवां लोकसभा चुनाव भारतीय लोकतंत्र के ध्वंस की दिशा में एक और कदम मात्र है ।

बहरहाल भले ही लोकसभा चुनाव-2014 लोकतंत्र के ध्वंस की दिशा में एक और कदम हो किन्तु इसमें कोई शक ही कि यह चुनाव कथित नीची जाति के नरेंद्र मोदी के नाम रहा। इसमें भाजपा नहीं, मोदी की ऐसी सुनामी चली जिसमें देश में सुदीर्घ काल तक शासन करने वाली कांग्रेस ही नहीं,सामाजिक न्याय तथा मुस्लिम राजनीति सहित धूमकेतु की तरह उभरी नई पार्टी 'आप' भी क्षत-विक्षत हो गयी। इनमें आप की बर्बादी से भले ही लोकतंत्र प्रेमी बहुजनों को काफी राहत मिली हो किन्तु यह मान लेना ही ठीक रहेगा कि 'आप' के रूप में भारतीय राजनीति में एक लाइलाज वायरस का जनम हो चुका है। मोदी की सुनामी में ध्वस्त हुई कांग्रेस और सामाजिक न्याय की राजनीति का भविष्य पूरी तरह डाइवर्सिटी के अंगीकरण पर ही निर्भर है,यह सत्योद्‌घाटन भी यह पुस्तक करती है।

सोलहवें लोकसभा चुनाव में मोदी की जो आंधी चली,उस पर राजनीति के पंडित लम्बे समय तक बहस चलाते रहेंगे। किन्तु मेरा मानना है कि मोदी की सोशल इंजीनियरिंग इसमें प्रमुख फैक्टर रहा। इस पुस्तक में छपा 'मोदी की सोशल इंजीनियरिंग' नामक लेख इस पर विस्तृत रोशनी डालता है। डॉ. संजय पासवान और रामदास आठवले के बाद राम विलास पासवान, डॉ. उदित राज, उपेन्द्र कुशवाहा, अनुप्रिया पटेल ,छेदी पासवान राम कृपाल यादव,जनक चमार इत्यादि जैसे जनाधार वाले नेताओं का भाजपा के साथ जुड़ना मोदी के मिशन -272 के लिए एक टर्निंग प्वाइंट साबित हुआ। मेरी यह सोच कितनी सही या गलत है, इस पर मैंने देश के कुछ प्रतिष्ठित विद्वानों का साक्षात्कार लिया है,जो पाठको को निष्कर्ष पर पहुँचने में सहायक होगी।

बहरहाल राष्ट्र के जीवन में अच्छे दिन आने की प्रत्याशा जगा कर प्रचंड बहुमत से सत्ता में आई मोदी सरकार ने सौ दिन पूरे होने का जश्न मना लिया है। इस दरम्यान देश का परम्परागत सुविधासंपन्न तबके ने भले ही अच्छे दिन की आहट महसूस किया हो,किन्तु दबे कुचले जाति के लोगों ने जिस नीची जाति के भावी पीएम को सत्ता में लाया ,वह मोदी उनकी प्रत्याशा पूरी करने में अबतक व्यर्थ हैं। मोदी सरकार का पूरा चाल चलन देखकर लग रहा है कि भाजपा अपने पुराने सवर्णवादी चरित्र से जरा भी नहीं उबर पाई है। उत्तराखंड से शुरु हुआ भाजपा के हार का सिलसिला बिहार तक पहुचने के बाद लगता है नीची जाति के लोग भाजपा के मूल

चरित्र को समझने लगे हैं इसलिए बड़ी तेजी से वे पिछड़ी जाति के मोदी से मोहमुक्त हुए जा रहे हैं। इस कारण ही सोलहवीं लोकसभा में ध्वस्त हुए सामाजिक न्याय के योद्धा धीरे-धीरे ताकतवर होते जा रहे हैं। यह मोदी सरकार के लिए निश्चय ही खतरे की घंटी है। इसका इलाज 'बिहार विधानसभा चुनाव के सन्देश' में सुझाया गया है।

अंत में उन सभी विद्वानों को अशेष धन्यवाद जिन्होंने अपना साक्षात्कार देकर मेरे लेखों के संग्रह वाली इस पुस्तक की गरिमा वृद्धि की है। अशेष धन्यवाद उन तमाम साथियों को जो तन-मन-धन से मिशन डाइवर्सिटी को सहयोग कर रहे हैं।

नौवां डाइवर्सिटी डे
(11, अक्तूबर, 2014)

एच.एल. दुसाध
राष्ट्रीय अध्यक्ष, बहुजन डाइवर्सिटी मिशन

अध्याय–1

सोलहवीं लोकसभा चुनाव के मुद्दे

लोकसभा चुनाव-2014 के मुद्दे और डाइवर्सिटी

लोकतंत्र प्रेमी साथियों,

भीषण विषमता से देश बंटा अतुल्य और बहुजन भारत में

सोलहवीं लोकसभा का चुनाव एक ऐसे समय में होने जा रहा है जब देश में व्याप्त भीषणतम विषमता के कारण हमारे लोकतंत्र पर गहरा संकट मंडरा रहा है। विषमता का आलम यह है कि परम्परागत रूप से सुविधासंपन्न और और विशेषाधिकारयुक्त अत्यन्त अल्पसंख्यक तबके का जहां शासन-प्रशासन, उद्योग-व्यापार, सांस्कृतिक-शैक्षणिक प्रत्येक क्षेत्र में 80-85 प्रतिशत कब्जा है, वहीं परम्परागत रूप से तमाम क्षेत्रों से ही वंचित बहुसंख्यक तबका, जिसकी आबादी 85 प्रतिशत है, 15-20 प्रतिशत अवसरों पर आज भी जीवन निर्वाह करने के लिए विवश है। ऐसी गैर-बराबरी विश्व में कहीं और नहीं है। किसी भी डेमोक्रेटिक कंट्री में परम्परागत रूप से सुविधासंपन्न तथा वंचित तबकों के मध्य आर्थिक-राजनीतिक सांस्कृतिक इत्यादि क्षेत्रों में अवसरों के बंटवारे में भारत जैसी असमानता नहीं है। इस असमानता ने देश को 'अतुल्य' और 'बहुजन'-भारत में बांटकर रख दिया है। चमकते अतुल्य भारत में जहां तेजी से लखपतियों-करोड़पतियों की संख्या बढती जा रही है, वहीं जो 84 करोड़ लोग 20 रुपये रोजाना पर गुजर-बसर करने के लिए मजबूर हैं, वे मुख्यतः बहुजन भारत के लोग हैं। उद्योग-व्यापार, धार्मिक और सांस्कृतिक क्षेत्र से लगभग पूरी तरह बहिष्कृत बहुजनों के लिए रोजगार के नाम पर अवसर मुख्यतः असंगठित क्षेत्र में है, जहां न प्राविडेंट फंड, वार्षिक छुट्टी व चिकित्सा की सुविधा है और न ही रोजगार की सुरक्षा।

भीषणतम आर्थिक और सामाजिक गैर-बराबरी से मिली : लोकतंत्र को चुनौती

अवसरों के असमान बंटवारे से उपजी आर्थिक और सामाजिक विषमता का जो स्वाभाविक परिणाम सामने आना चाहिए, वह सामने आ रहा है। देश के लगभग 200 जिले माओवाद की चपेट में आ चुके हैं। लाल गलियारा बढ़ता जा रहा है और दंतेवाड़ा जैसे कांड राष्ट्र को डराने लगे हैं। इस बीच माओवादियों ने एलान कर

दिया है कि वे 2050 तक बन्दूक के बल पर लोकतंत्र के मंदिर पर कब्जा जमा लेंगे। इसमें कोई शक नहीं कि विषमता की खाई यदि इसी तरह बढती रही तो कल आदिवासियों की भांति ही अवसरों से वंचित दूसरे तबके भी माओवाद की धारा से जुड़ जायेंगे, फिर तो माओवादी अपने मंसूबों को पूरा करने में जरूर सफल हो जायेंगे और यदि यह अप्रिय सत्य सामने आता है तो हमारे लोकतंत्र का जनाजा ही निकल जायेगा। ऐसी स्थिति सामने न आये, इसके लिए डॉ. आंबेडकर ने संविधान सौंपने के पूर्व 25 नवम्बर, 1949 को राष्ट्र को सतर्क करते हुए एक अतिमूल्यवान सुझाव दिया था।

बाबा साहेब डॉ. आंबेडकर की चेतावनी

उन्होंने कहा था-"26 जनवरी 1950 को हमलोग एक विपरीत जीवन में प्रवेश करने जा रहे हैं। राजनीति के क्षेत्र में हमलोग समानता का भोग करेंगे किन्तु सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में मिलेगी असमानता। राजनीति के क्षेत्र में हमलोग एक नागरिक को एक वोट एवं प्रत्येक वोट के लिए एक ही मूल्य की नीति को स्वीकृति देने जा रहे हैं। हमलोगों को निकटतम समय के मध्य इस विपरीतता को दूर कर लेना होगा, अन्यथा यह असंगति कायम रही तो विषमता से पीड़ित जनता इस राजनैतिक गणतंत्र की व्यवस्था को विस्फोटित कर सकती है।"

हमारे महान राजनेता/लोकतंत्र-प्रेमी या लोकतंत्र-विरोधी!

ऐसी चेतावनी देने वाले बाबा साहेब ने भी शायद कल्पना नहीं की होगी कि भारतीय लोकतंत्र की उम्र छह दशक पूरी होते-होते विषमता से पीड़ित लोगों का एक तबका उसे विस्फोटित करने पर आमादा हो जायेगा। लेकिन यह स्थिति सामने आ रही तो इसलिए कि आजाद भारत के हमारे शासकों ने संविधान निर्माता की सावधानवाणी की पूरी तरह अनदेखी की। वे स्वभावतः लोकतंत्र विरोधी थे। अगर वे लोकतंत्र प्रेमी होते तो केंद्र से लेकर राज्यों तक में काबिज हर सरकारों की कर्मसूचियां मुख्यतः आर्थिक और सामाजिक विषमता के खात्मे पर केन्द्रित होतीं। तब आर्थिक और सामाजिक विषमता का वह भयावह मंजर कतई हमारे सामने नहीं होता जिसके कारण हमारा लोकतंत्र विस्फोटित होने की ओर अग्रसर है। इस लिहाज से पंडित नेहरू, इंदिरा गांधी, राजीव गांधी, नरसिंह राव, अटल बिहारी वाजपेयी, जय प्रकाश नारायण, ज्योति बसु जैसे महानायकों की भूमिका का आकलन करने पर निराशा और निराशा के सिवाय और कुछ नहीं मिलता। अगर इन्होंने डॉ. आंबेडकर की चेतावनी को ध्यान में रखकर आर्थिक और सामाजिक विषमता के त्वरित गति से खत्म होने लायक नीतियां अख्तियार की होतीं, क्या 10-15 प्रतिशत परम्परागत सुविधाभोगी वर्ग का शासन-प्रशासन, उद्योग-व्यापार, शैक्षणिक सांस्कृतिक क्षेत्रों पर 80-85 प्रतिशत वर्चस्व

स्थापित होता और क्या देश अतुल्य और बहुजन भारत में विभाजित होता?

राजनीति के हमारे महानायकों ने 'गरीबी-हटाओ', 'लोकतंत्र बचाओ', 'भ्रष्टाचार हटाओ' 'राम मंदिर बनाओ' इत्यादि जैसे आकर्षक नारे देकर महज शानदार तरीके से सत्ता दखल किया किन्तु उस राज-सत्ता का इस्तेमाल लोकतंत्र की सलामती की दिशा में बुनियादी काम करने में नहीं किया। इनके आभामंडल के सामने भारत में मानव-जाति की सबसे बड़ी समस्या आर्थिक और सामाजिक विषमता पूरी तरह उपेक्षित रही। इस देश की वर्णवादी मीडिया और बुद्धिजीवियों को इनकी बड़ी-बड़ी जीतों में लोकतंत्र की जीत दिखाई पड़ी। दरअसल इस देश के बुद्धिजीवियों के लिए इतना ही काफी रहा है कि पड़ोस के देशों की भांति भारत में सत्ता परिवर्तन बुलेट, नहीं बैलेट से होता रहा है। सिर्फ इसी बिना पर भारत के लोकतंत्र पर गर्व करने वालों बुद्धिजीवियों की कमी नहीं रही। अतः महज वोट के रास्ते सत्ता परिवर्तन से संतुष्ट बुद्धिजीवियों ने प्रकारांतर में लोकतंत्र के विस्फोटित होने लायक सामान स्तूपीकृत कर रहे राजनेताओं को डॉ. आंबेडकर की सतर्कतावाणी याद दिलाने की जहमत ही नहीं उठायी। मजे की बात यह है कि आजाद भारत की राजनीति के महानायक आज भी लोगों के हृदय सिंहासन पर विराजमान हैं। आज भी उनके अनुसरणकारी उनके नाम पर वोटरों को रिझाने का प्रयास करते हैं। बहरहाल हमारे राष्ट्र नायकों से कहां चूक हो गयी जिससे विश्व में सर्वाधिक विषमता का साम्राज्य भारत में व्याप्त हुआ और जिसके कारण ही विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र आज विस्फोटित होने की और अग्रसर है?

आर्थिक-सामाजिक विषमता की उत्पत्ति के पीछे सामाजिक और लैंगिक विविधता की अनदेखी

एक तो ऐसा हो सकता है कि गांधीवादी-राष्ट्रवादी और मार्क्सवादी विचारधारा से जुड़े हमारे तमाम राष्ट्र नायक ही समग्र वर्ग की चेतना से समृद्ध न होने के कारण, ऐसी नीतियां ही बनाये जिससे परम्परागत सुविधासंपन्न तबके का वर्चस्व अटूट रहे। दूसरी यह कि उन्होंने आर्थिक और सामाजिक विषमता की उत्पत्ति के कारणों को ठीक से जाना नहीं, इसलिए निवारण का सम्यक उपाय न कर सके। प्रबल सम्भावना यही दिखती है कि उन्होंने ठीक से उपलब्धि ही नहीं की कि सदियों से ही सारी दुनिया में आर्थिक और सामाजिक गैर-बराबरी, जोकि मानव जाति की सबसे बड़ी समस्या है, की सृष्टि शक्ति के स्रोतों (आर्थिक-राजनीतिक और धार्मिक) में सामाजिक (Social) और लैंगिक (Gender) विविधता (Diversity) के असमान प्रतिबिम्बन के कारण होती रही है। अर्थात् लोगों के विभिन्न तबकों और उनकी महिलाओं के मध्य आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक-शक्ति का असमान बंटवारा कराकर ही सारी दुनिया के शासक विषमता की स्थिति पैदा करते रहे हैं। इसकी सत्योपलब्धि कर ही अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड इत्यादि जैसे लोकतान्त्रिक रूप से

परिपक्व देशों ने अपने-अपने देशों में शासन-प्रशासन, उद्योग-व्यापार, फिल्म-टीवी-मीडिया इत्यादि हर क्षेत्र में सामाजिक और लैंगिक विविधता के प्रतिबिम्बन की नीति पर काम किया और मानव जाति की सबसे बड़ी समस्या से पार पाया। किन्तु उपरोक्त देशों से लोकतंत्र का प्राइमरी पाठ पढने सहित कला-संस्कृति-फैशन-टेक्नोलॉजी इत्यादि सब कुछ ही उधार लेने वाले हमारे शासकों ने उनकी विविधता नीति से पूरी तरह परहेज किया। किन्तु ऐसा नहीं करना चाहिए था क्योंकि आजाद भारत के शासकों से भी विदेशियों की तरह 'डाइवर्सिटी नीति' अख्तियार करने की प्रत्याशा थी, ऐसा कई इतिहासकारों का मानना है।

आजाद भारत को अपने शासकों से विविधता के सम्मान की प्रत्याशा थी

ऐसे इतिहासकारों के अनुसार '1947 में देश ने अपने आर्थिक पिछड़ेपन, भयंकर गरीबी, करीब-करीब निरक्षरता, व्यापक तौर पर फैली महामारी, भीषण सामाजिक विषमता और अन्याय के उपनिवेशवादी विरासत से उबरने के लिए अपनी लम्बी यात्रा की शुरूआत की थी। 15 अगस्त पहला पड़ाव था, यह उपनिवेशिक राजनीतिक नियंत्रण में पहला विराम था : शताब्दियों के पिछड़ेपन को अब समाप्त किया जाना था, स्वतंत्रता संघर्ष के वादों को पूरा किया जाना था और जनता की आशाओं पर खरा उतरना था। भारतीय राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाना, राष्ट्रीय राजसत्ता को सामाजिक रूपांतरण के उपकरण के रूप में विकसित एवं सुरक्षित रखना सबसे महत्वपूर्ण कार्य था। यह महसूस किया जा रहा था कि भारतीय एकता को आंख मूंदकर मान नहीं लेना चाहिए। इसे मजबूत करने के लिए यह स्वीकार करना चाहिए कि भारत में अत्यधिक क्षेत्रीय, भाषाई, जातीय एवं धार्मिक विविधताएं मौजूद हैं। भारत की बहुतेरी अस्मिताओं को स्वीकार करते एवं जगह देते हुए तथा देश के विभिन्न भागों और लोगों के विभिन्न तबकों को भारतीय संघ में पर्याप्त स्थान देकर भारतीयता को और मजबूत किया जाना था।'

भारत में सामाजिक और लैंगिक विविधता का प्रतीकात्मक प्रतिबिम्बन

इतिहासकारों की उपरोक्त टिप्पणी बताती है कि हमारे शासकों को इस बात का इल्म जरूर था कि राजसत्ता का इस्तेमाल हर क्षेत्र में सामाजिक और लैंगिक विविधता के प्रतिबिम्बन में करना है। यही कारण है उन्होंने किया भी, मगर प्रतीकात्मक। जैसे हाल के वर्षों में हमने लोकतंत्र के मंदिर में अल्पसंख्यक प्रधानमंत्री, महिला राष्ट्रपति, मुसलमान उप-राष्ट्रपति, दलित लोकसभा स्पीकर, आदिवासी डिप्टी स्पीकर के रूप सामाजिक और लैंगिक विवधता का शानदार नमूना देखा। मगर यह नमूना सत्ता की सभी संस्थाओं, सप्लाई, डीलरशिप, ठेकों, पार्किंग-परिवहन, मीडिया फिल्म-टीवी, शिक्षण संस्थाओं के प्रवेश-अध्यापन, पौरोहित्य इत्यादि में पेश नहीं किया गया।

वोट खरीदने के लिए राहत और भीखनुमा घोषणाओं पर निर्भर हमारे राजनीतिक दल

हमारे स्वाधीन भारत के शासक स्व-वर्णीय हित के हाथों विवश होकर या आर्थिक-सामाजिक विषमता की सृष्टि के कारणों से अनभिज्ञ रहने के कारण शक्ति के स्रोतों का लोगों के विभिन्न तबकों और उनकी महिलाओं के मध्य बंटवारे की सम्यक नीति न ग्रहण कर सके। उन्होंने आर्थिक-सामाजिक विषमता के लिए भागीदारी मूलक योजनाओं की जगह 'गरीबी-उन्मूलन' को प्राथमिकता देते हुए राहत और भीखनुमा योजनाओं पर काम किया जिसकी 80-85 प्रतिशत राशि भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ती रही। शासक दलों की शक्ति के स्रोतों के बंटवारा-विरोधी नीति के फलस्वरूप बहुसंख्यक समाज इतना अशक्त हुआ कि वह शक्ति के स्रोतों में अपनी हिस्सेदारी की बात भूलकर विषमता बढाने वाली राहत भीखनुमा घोषणाओं के पीछे अपना कीमती वोट लुटाने लगा। राजनीतिक दलों ने भी उसकी लाचारी को भांपते हुए लोकलुभावन घोषणायें करने में एक दूसरे से होड़ लगाना शुरू कर दिया।

भीखनुमा घोषणाओं के चलते मुद्दाविहीन रहा 15वीं लोकसभा चुनाव

इस बीच कई बार जिस तरह शासक दलों ने भीषण विषमता तथा अवसरों के असमान बंटवारे को लेकर गहरी चिंता व्यक्त की, उससे लगा अब आने वाले दिनों में राहत की जगह भागीदारीमूलक घोषणाओं के आधार पर वोट लेने का दौर शुरू होगा। किन्तु, पार्टियों द्वारा विषमता को लेकर गहरी चिंता व्यक्त करने के बावजूद कोई फर्क नहीं पड़ा। मसलन 2009 में आयोजित 15वीं लोकसभा चुनाव को लिया जाय। उक्त चुनाव से पहले भूमंडलीकरण के दौर में भारत का तेज विकास चर्चा का विषय बन गया था। तेज विकास को देखते हुए दुनिया के ढेरों अर्थशास्त्री भारत के विश्व आर्थिक महाशक्ति बनने के दावे करने लगे थे। लेकिन इस तेज विकास के साथ चर्चा विकास के असमान बंटवारे की भी कम नहीं थी। उन दिनों नोबेल पुरस्कार विजेता अमर्त्य सेन ने बार-बार कहा था, 'गरीबी कम करने के लिए आर्थिक विकास पर्याप्त नहीं है। मैं उनसे सहमत नहीं हूं जो कहते हैं आर्थिक विकास के साथ गरीबी में कमी आई है।' उनसे भी आगे बढ़कर कई मौकों पर राष्ट्र को चेताते हुए प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने कहा था 'जिस तेजी से विकास हो रहा है, उसके हिसाब से गरीबी कम नहीं हो रही है। अनुसूचित जाति, जनजाति और अल्पसंख्यकों को इसका लाभ नहीं मिल रहा है। देश में जो विकास हुआ है उस पर नजर डालने पर साफ दिखाई देता है कि गैर-बराबरी काफी बढ़ी है।' यही नहीं गैर-बराबरी से चिंतित प्रधानमंत्री ने अर्थशास्त्रियों से सृजनशील सोच की मांग भी की थी ताकि आर्थिक-विषमता की चुनौती से जूझा जा सके। उन्हीं दिनों राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल ने विषमता की समस्या से चिंतित होकर बदलाव की एक नई क्रांति का आह्वान किया था। अतः प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति द्वारा विगत वर्षों में आर्थिक विषमता की समस्या पर एकाधिक बार चिंता व्यक्त किये जाने के बाद उम्मीद थी कि

Continue Your Reading Journey

This preview has ended. Access the complete library and support our mission.

Join Our Inclusive Reading Community

✓ We champion diverse voices and perspectives
✓ Your support helps amplify underrepresented authors
✓ We provide free access to educational institutions
✓ Building bridges through shared stories
✓ Creating space for all narratives to be heard

Support Our Mission

Your donation enables us to:
• Curate diverse book collections
• Support authors from marginalized communities
• Provide free resources to educators
• Maintain our accessible digital library

Visit: www.diversitymission.in

Sign the diversity pledge • Make a donation • Download full library